बलराम प्रसाद अग्रवाल

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

10 दिसंबर, 1996

[जी.एन. रे और एस.बी. मजमुदार, न्यायमूर्तिगण]

साक्ष्य अधिनियम, 1872: धारा 60

अनुश्रुत (अनुश्रुत बात) — किसी अन्य व्यक्ति की सूचना के आधार पर साक्षी की गवाही की स्वीकार्यता — उक्त सूचनादाता की भी जांच की गई — साक्षी ने भी पुलिस से संपर्क किया और उस सूचना के आधार पर प्राथमिकी दर्ज कराया — मुकदमे के दौरान सूचनादाता मुकर गया — अभिनिर्धारित : भले ही ऐसी सूचना अनुश्रुत बात होने के कारण खारिज कर दी जाए, फिर भी यह उस साक्षी के आचरण के रूप में स्वीकार्य बनी रहती है जिसने पुलिस से संपर्क किया और उस सूचना के आधार पर प्राथमिकी दर्ज कराई — मुकर गए साक्षी के साक्ष्य का यह हिस्सा अनुश्रुत बातों के साक्ष्य को बाहर करने के नियम के अंतर्गत नहीं आएगा।

धारा 8- आचरण- अनुश्रुत बातें साक्षी के आचरण की व्याख्या करने हेतु स्वीकार्य थीं।

धारा 106- तथ्य का प्रमाण- आरोपी के व्यक्तिगत और विशेष ज्ञान के अंतर्गत तथ्य का प्रमाण- ससुराल के घर के आंगन में स्थित कुएं में गृहिणी की मृत्यु। घटना के समय घर में केवल मृतक और आरोपी ही उपस्थित थे। मृतक के प्रति आरोपी का वर्षों से चला आ रहा जानबूझकर किया गया क्रूर आचरण सिद्ध हुआ। अभिनिर्धारित : प्रारंभ में अभियोजन पक्ष पर मामले को संदेह से परे साबित करने का भार था। लेकिन एक बार यह भार निर्वहित हो जाने के बाद, आरोपी को यह साबित करना था कि उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को क्या हुआ था जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, क्योंकि यह तथ्य आरोपी के व्यक्तिगत और विशेष ज्ञान में था। आरोपी इस भार को निर्वहित नहीं कर पाया।

धारा 32- कुएं में गृहिणी की मृत्यु- पिता ने मृतक द्वारा पहले बताई गई बातों के बारे में गवाही दी कि उसे आरोपी के हाथों कितना कष्ट सहना पड़ा था- अभिनिर्धारित : ऐसा साक्ष्य धारा 32 के तहत स्वीकार्य है।

धारा 114- कुएं में गृहिणी की मृत्यु- मृतक के साथ उसके पति और ससुराल वालों द्वारा वर्षों तक दुर्व्यवहार किया जाना सिद्ध हुआ- अभिनिर्धारित: मामले की परिस्थितियों में, यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ऐसा दुर्व्यवहार तब तक जारी रहा जब तक कि उसे आत्महत्या करने के लिए मजबूर नहीं किया गया।

दंड संहिता, 1860 धारा 498-ए.

परिस्थितिजन्य साक्ष्य- ससुराल के घर के आंगन में स्थित कुएं में गृहिणी की मृत्यु- पर्याप्त दहेज न लाने और संतान न होने के कारण पति और ससुराल वालों द्वारा उसके साथ दुर्व्यवहार सिद्ध हुआ- दो बच्चों को जन्म देने के बावजूद भी यह दुर्व्यवहार जारी रहा- पति पुनर्विवाह करने की भी योजना बना रहा था- मृतक ने पहले भी उसी कुएं में कूदकर आत्महत्या करने का प्रयास किया था लेकिन पड़ोसियों ने उसे बचा लिया- घटना के समय घर में केवल मृतक और आरोपी ही मौजूद थे- पड़ोसियों ने झगड़े और मृतक के रोने की आवाज सुनी- अभिनिर्धारित : परिस्थितियाँ आरोपी के दोष को निर्णायक रूप से सिद्ध करती हैं- दुर्घटना से मृत्यु की संभावना को खारिज कर दिया गया।

भारत का संविधान, 1950: अनुच्छेद 142

मामले को पुनर्विचार के लिए वापस भेजने के बजाय, सर्वोच्च न्यायालय के पास अभियुक्त की दोषसिद्धि की जांच करने की शक्ति है- अभियुक्त पर धारा 498-ए, 302 और 120-बी के तहत आरोप पत्र दायर किया गया था, लेकिन अधीनस्थ न्यायालय ने केवल धारा 302, भारतीय दंड संहिता के तहत आरोप तय किए- अभियुक्त को बरी कर दिया गया- अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य स्पष्ट रूप से धारा 498-ए के तहत आरोप को आकर्षित करते हैं। मामले की परिस्थितियों में, सर्वोच्च न्यायालय स्वयं धारा 498-ए के तहत अपराध के लिए अभियुक्त की दोषसिद्धि की जांच कर सकता है ताकि मुकदमे की अवधि लंबी न हो और अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही की बहुलता से बचा जा सके- दंड प्रक्रिया संहिता, 1973, धारा 216, 222।

दांडिक विचारण:

साक्षी - पक्षद्रोही साक्षी - अभिनिर्धारित : विरोधी साक्षी के साक्ष्य पर उस हद तक भरोसा किया जा सकता है, जिस हद तक वह अभियोजन पक्ष के संस्करण की पुष्टि करता है।

अपर न्यायिक आयुक्त द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के साथ धारा 34 तहत लगाए गए आरोपों से अभियुक्तों को बरी कर दिया गया था। इस फैसले को उच्च न्यायालय ने भी बरकरार रखा। अतः अपीलकर्ता- मूल शिकायतकर्ता ने यह अपील दायर की है।

अभियोजन पक्ष के अनुसार, मृतका का विवाह उत्तरदाता सं. 2 से हुआ था। विवाह के पाँच- छह वर्ष बाद भी जब कोई संतान उत्पन्न नहीं हुई, तो उत्तरदाता सं. 3 ने मृतका की हत्या करवाकर अपने छोटे भाई, उत्तरदाता सं. 2 का विवाह किसी अन्य लड़की से करवाने का प्रयास किया। मृतका के पिता, अपीलकर्ता (मूल शिकायतकर्ता), द्वारा किए गए उपचार के बाद, उसने दो पुत्रों को जन्म दिया। उपरोक्त घटनाओं के बावजूद, मृतका पर अत्याचार जारी रहा। आरोपी लगातार दहेज की मांग करते रहे और जब मृतका ने उनकी मांग पूरी नहीं की, तो आरोपियों ने उसे शारीरिक रूप से पीटना शुरू कर दिया और उसे प्रताड़ित किया, जिससे उसके जीवन को खतरा उत्पन्न हुआ। अत्याचारों से तंग आकर उसने लगभग चार वर्ष पूर्व एक कुएँ में कूदने का प्रयास किया था, लेकिन पड़ोसियों ने उसे बचा लिया था।

अभियोजन पक्ष का आगे का मामला यह था कि उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को मृतक अपने ससुराल के घर के पिछवाड़े में स्थित कुएँ में गिर गई थी, जिसमें तीनों आरोपी उसके साथ रहते थे। अगले दिन उत्तरदाता सं. 2 ने अपीलकर्ता को सूचित किया कि मृतक की कुएँ में गिरने से मृत्यु हो गई है। इसके बाद अपीलकर्ता मृतक के ससुराल गया, जहाँ उसने मृतक का शव कुएँ के पास पड़ा पाया। कुछ समय बाद अपीलकर्ता अपने पोते से मिलने के लिए आरोपी के घर गया। उस समय उसे पड़ोसियों ने बताया कि घटना वाले दिन की रात को आरोपी के घर में झगड़ा हुआ था और उन्होंने मृतक के रोने- चिल्लाने की आवाज सुनी थी और यह भी कि मृतक को उसके ससुराल वालों ने पीटा था। इस सूचना पर अपीलकर्ता ने प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई। जांच के बाद उत्तरदाता- आरोपियों के खिलाफ धारा 498-ए, 120- ए और 302 के साथ धारा 34 भारतीय दंड संहिता के तहत आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया और अधीनस्थ न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के साथ धारा 34 के तहत आरोप पत्र तैयार किया गया।

इस न्यायालय के समक्ष अपील में अपीलकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया कि मृतक को आरोपियों द्वारा लगातार क्रूर व्यवहार का सामना करना पड़ा था; कि मृतक ने पहले भी उसी कुएं में कूदकर आत्महत्या करने का प्रयास किया था, लेकिन पड़ोसियों ने उसे बचा लिया था; कि आरोपी उसे प्रताड़ित कर रहे थे और उसके साथ अत्यधिक क्रूरता का व्यवहार

कर रहे थे; कि इन परिस्थितियों में, हालांकि उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को आरोपी द्वारा उसे कुएं में फेंकने के प्रत्यक्ष कृत्य के संबंध में कोई स्पष्ट साक्ष्य नहीं था, फिर भी आरोपियों द्वारा की गई क्रूरता के कारण उसे आत्महत्या करने के लिए विवश होना पड़ा; कि पड़ोसियों द्वारा बताई गई बातों पर आधारित अपीलकर्ता के साक्ष्य, जिसकी पुष्टि अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य से भी हुई, भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत आरोपियों के खिलाफ कम गंभीर आरोप को स्पष्ट रूप से स्थापित करते हैं; कि अपीलकर्ता द्वारा दिए गए बयान को अनुश्रुत बातों तक सीमित नहीं रखा जा सकता क्योंकि पड़ोसियों को साक्षी के रूप में पेश किया गया था; कि भले ही पुलिस ने आरोपियों के खिलाफ धारा 498-ए के तहत आरोप पत्र दाखिल किया था, लेकिन विचारण न्यायालय ने आरोपियों के खिलाफ इस वैकल्पिक आरोप को तय करने में गलत तरीके से विफल रहा। और या तो मामले को नए सिरे से सुनवाई के लिए वापस भेजा जाए या भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत यह न्यायालय साक्ष्यों की जांच कर धारा 498-ए, भारतीय दंड संहिता के तहत अपराध के लिए उत्तरदाता-अभियुक्त के दोष के संबंध में निर्णय ले सके।

अभियुक्तों की ओर से यह तर्क दिया गया कि अभिलेख में मौजूद साक्ष्य अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत अपराध से नहीं जोड़ते; कि अभियोजन पक्ष के साक्षी के रूप में पेश किए गए पड़ोसी मुकर गए और उन्होंने अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन नहीं किया; कि अपीलकर्ता द्वारा पड़ोसियों से प्राप्त जानकारी के बारे में दिया गया बयान पूरी तरह से अनुश्रुत बातों पर आधारित था; कि मृतक का कुएं में डूबना एक मात्र दुर्घटना थी और यदि मृतक ने आत्महत्या भी की थी तो अभियुक्त उक्त आत्महत्या के लिए जिम्मेदार नहीं थे।

अपील को स्वीकार करते हुए, इस न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. भले ही मृतक के पिता को पड़ोसियों द्वारा उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को सुनी गई बातों के बारे में दी गई जानकारी को अनुश्रुत बात मानकर खारिज कर दिया जाए, फिर भी यह तथ्य कि पड़ोसियों द्वारा उन्हें कुछ जानकारी दी गई थी जिसके कारण उन्होंने पुलिस के पास जाने का फैसला किया, क्योंकि उन्हें पड़ोसियों द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर उस रात आरोपियों के आचरण के बारे में गंभीर संदेह था और जिसके कारण उन्हें अपनी बेटी की अप्राकृतिक मृत्यु के संबंध में उनकी संलिप्तता का संदेह हुआ, साक्ष्य में स्वीकार्य रहेगा क्योंकि इस साक्षी का आचरण पड़ोसियों द्वारा दी गई ऐसी जानकारी से प्रेरित था, न कि

पहले पुलिस के पास जाने से। साक्षी के साक्ष्य का यह भाग अनुश्रुत बातों के साक्ष्य को बाहर करने के नियम के अंतर्गत नहीं आएगा। [769- एफ- एच; 770- ए- बी]

भुगडोमल गंगाराम एवं अन्य बनाम गुजरात राज्य, एआईआर (1983) एससी 906 और *जे.डी. जैन बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का प्रबंधन और एक अन्य* एआईआर (1982) एससी 673, पर अवलंबन किया गया।

सुब्रमणियन बनाम लोक अभियोजक, (1958) डब्ल्यूएलआर 965, उद्धृत।

1.2. उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को पीड़िता के अलावा घर में केवल आरोपी ही मौजूद थे। इस प्रकार उस रात क्या हुआ और किस कारण से मृतक कुएं में गिरी, यह सब पूरी तरह से आरोपी के निजी और विशेष ज्ञान में होना चाहिए था। लेकिन उन्होंने इस पहलू पर चुप्पी साधे रखी। यह सत्य है कि मामले को संदेह से परे साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर होता है। लेकिन एक बार जब अभियोजन पक्ष यह साबित कर देता है कि आरोपी मृतक के प्रति वर्षों तक लगातार क्रूरतापूर्ण आचरण के दोषी थे, जैसा कि मृतक लड़की के पिता की अडिग गवाही से अच्छी तरह से स्थापित है, तो उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को घर में मौजूद आरोपियों के निजी ज्ञान में मौजूद तथ्यों को वे अभियोजन पक्ष के मामले को गलत साबित करने के लिए प्रकट कर सकते थे। साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के तहत यह भार आरोपियों द्वारा पूरा नहीं किया गया है। [765- बी- डी]

शंभू नाथ मेहरा बनाम अजमेर राज्य, एआईआर (1956) एससी 404 और *मद्रास सीमा शुल्क कलेक्टर और अन्य बनाम डी. भूर्मुल* एआईआर एससी 859, पर अवलंबन किया गया।

बाल्टोच बनाम आर्चर, (1774) 1 काउप 63, उद्धृत।

बेस्ट: *"साक्ष्य विधि",* 12वां संस्करण, लेख 320, पृष्ठ 291, उद्धृत।

2.1. मृतक के पिता के साक्ष्य से पता चलता है कि उनकी बेटी का वैवाहिक जीवन, आरोपी के घर में, शुरू से ही कठिनाइयों से भरा रहा। दहेज की राशि आरोपी की संतुष्टि के अनुरूप न लाने और संतान न होने के कारण उसके साथ दुर्व्यवहार किया गया। उसका पति पुनर्विवाह करने की भी सोच रहा था। शिकायतकर्ता के साक्ष्य से यह भी पता चलता है कि उनकी मृत बेटी ने पहले आत्महत्या का प्रयास किया था, लेकिन पड़ोसियों ने समय रहते उसकी जान बचा ली थी। दो बेटों के जन्म के बाद भी, उनकी मृत बेटी के साथ दुर्व्यवहार और झगड़े उस दुर्भाग्यपूर्ण रात तक जारी रहे। अतः, साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 114 के

तहत यह सुरक्षित रूप से अनुमान लगाया जा सकता है कि आरोपी द्वारा मृतक के साथ किया गया क्रूर व्यवहार उस दुर्भाग्यपूर्ण रात तक जारी रहा, जब उसे आत्महत्या करने के लिए मजबूर होना पड़ा। अभिलेख पर स्थापित क्रूर व्यवहार की निरंतरता का ऐसा अनुमान निश्चित रूप से आरोपी की ओर इशारा करता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के तहत ऐसे अनुमान का अभिलेख में खंडन नहीं हुआ है। शिकायतकर्ता द्वारा अपनी मृत बेटी द्वारा अभियुक्तों के हाथों झेली गई पीड़ाओं के बारे में पहले बताई गई बातें साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के तहत स्पष्ट रूप से स्वीकार्य हैं। [770- जी- एच; 771- ए- सी]

2.2. उस रात की असहनीय स्थिति की कल्पना करना आसान है जब दो नाबालिग बच्चों वाली एक युवा गृहिणी, जिसका छोटा बच्चा केवल साढ़े चार वर्ष का था, को आरोपी के घर में अपने दयनीय जीवन को समाप्त करने के लिए कुएं में कूदना पड़ा। जब तक उस पर अत्याचार असहनीय न हो गया हो, सामान्य मानवीय व्यवहार के अनुसार, जीवन के प्रति प्रतिबद्धताओं वाली ऐसी युवा गृहिणी अपने नवजात बेटों को बेसहारा और आरोपी की दया पर छोड़कर, अपने जीवन को समाप्त करने का इतना कठोर कदम नहीं उठा सकती थी, खासकर तब जब उसका पति पुनर्विवाह करने की सोच रहा था।[772- एफ- जी]

अंबिका प्रसाद ठाकुर और अन्य बनाम राम इकबाल राय (मृत) उनके कानूनी वारिसों और अन्य एआईआर (1966) एससी 605 और *काली राम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य,* एआईआर (1973) एससी 2773 पर अवलंबन किया गया।

3. अभियोजन पक्ष के साक्ष्य से यह स्पष्ट रूप से संदेह से परे साबित होता है कि आरोपी द्वारा किए गए दुर्व्यवहार और मृतक पर लगातार किए गए अत्याचारों के कारण, उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को मृतक के सब्र का अंतिम झटका लगा। इससे पहले उसने अपनी दयनीय जिंदगी खत्म करने के लिए उसी कुएं में छलांग लगाई थी, लेकिन पड़ोसियों ने उसे बचा लिया था। फिर भी, आरोपी के घर में उसका जीवन बेहतर नहीं हुआ। इसलिए, वह एक बार फिर उसी कुएं में कूदकर आत्महत्या करने की कोशिश करने के लिए विवश हो गई, जिसमें वह पहले कूदी थी। लेकिन उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को जब उसने कुएं में छलांग लगाई, तो उसे बचाने के लिए कोई पड़ोसी नहीं था और उसकी जान चली गई। इन परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता कि आरोपी इस 28 वर्षीय युवा गृहिणी, दो बच्चों की मां, के जीवन के दुखद अंत के लिए जिम्मेदार नहीं थे, जिसने आरोपियों के हाथों इतनी क्रूरता झेली थी कि आत्महत्या जैसा चरम कदम उठाने पर मजबूर हो गई। यह न तो हत्या का मामला है और न ही दुर्घटना

का। वर्तमान मामले के तथ्यों के आधार पर, अभियोजन पक्ष उचित संदेह से परे आरोपी को भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए, स्पष्टीकरण (ए) के तहत अपराध साबित करने में सक्षम रहा है। जब उसे ऐसा चरम कदम उठाने के लिए मजबूर किया गया, तो सभी आरोपी, जिनमें शामिल हैं, बरी किए गए आरोपी की सास घर में मौजूद थीं और उनके साथ पीड़िता और उसके दो नाबालिग बच्चे भी रहते थे। इसलिए, आरोपी ही पीड़िता को आत्महत्या के लिए उकसाने के लिए जिम्मेदार हैं, क्योंकि उनके दुर्व्यवहार के कारण झगड़ा और हल्ला हुआ, जिसमें एक महिला की आवाज सुनाई दी, जैसा कि पड़ोसी साक्षी ने भी स्वीकार किया, जिसने वास्तव में इसे सुना था। अभियोजन पक्ष द्वारा सिद्ध सभी परिस्थितियाँ निर्णायक रूप से केवल आरोपियों के दोषी होने को साबित करती हैं, किसी और के नहीं। ये स्थापित परिस्थितियाँ किसी भी दृष्टिकोण से आरोपियों की निर्दोषता की किसी भी संभावना को पूरी तरह से खारिज करती हैं। परिस्थितिजन्य साक्ष्यों की श्रृंखला आरोपियों के खिलाफ इतनी पूर्ण है कि उनकी निर्दोषता के बारे में किसी अन्य परिकल्पना को खारिज कर देती है। [773- बी- जी; 774- ए- सी]

4. यह सत्य है कि यद्यपि पुलिस ने अभियुक्त के विरुद्ध धारा 498-ए के अंतर्गत भी आरोपपत्र दाखिल किया था, फिर भी अधीनस्थ न्यायालय ने धारा 302 के अंतर्गत आरोप तय किया, जो स्पष्टतः अधिक गंभीर अपराध है, और धारा 498-ए, भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत कोई आरोप तय करना उचित नहीं समझा। परन्तु अभिलेख में मौजूद साक्ष्यों से उक्त आरोप स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है। इन परिस्थितियों में इस न्यायालय को उत्तरदाता- अभियुक्त के विरुद्ध धारा 498-ए के अंतर्गत आरोप तय करने के बाद उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर पुनर्विचार हेतु इन कार्यवाही को वापस भेजना आवश्यक होता, परन्तु यह प्रक्रिया आवश्यक नहीं है क्योंकि न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत प्राप्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए अभिलेख में मौजूद साक्ष्यों के आलोक में उक्त धारा के अंतर्गत अपराध के लिए अभियुक्त की संलिप्तता की जाँच स्वयं कर सकता है, ताकि मुकदमे की अवधि लंबी न हो और अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही की बहुलता न हो।[763- सी- ई]

ई.के. चंद्रसेनन बनाम केरल राज्य, [1995] 2 एससीसी 99, पर अवलंबन किया गया।

5. यह सर्वविदित है कि विरोधी साक्षी के साक्ष्य पर भी, जहाँ तक वह अभियोजन पक्ष के संस्करण की पुष्टि करता है, भरोसा किया जा सकता है।[769- बी]

खुज्जी उर्फ सुरेंद्र तिवारी बनाम मध्य प्रदेश राज्य, एआईआर (1991) एससी 1853 *और सत पॉल बनाम दिल्ली प्रशासन,* एआईआर (1976) एससी 294 पर अवलंबन किया गया।

दांडिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: दांडिक अपील संख्या 402 वर्ष 1996।

पटना उच्च न्यायालय के सीआर. आर. संख्या 10 वर्ष 1992 (आर) में दिनांक 27.7.95 के निर्णय और आदेश से।

अपीलकर्ता की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता एस.बी. सान्याल, गोपाल प्रसाद और के. पांडे उपस्थित हुए।

उत्तरदाताओं की ओर से बी.बी. सिंह और अंजनी कुमार झा उपस्थित हुए।

न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित द्वारा सुनाया गया

एस.बी. मजमुदार, न्यायमूर्ति भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत विशेष अनुमति से दायर इस अपील में अपीलकर्ता- मूल शिकायतकर्ता ने सत्र विचारण वाद में उत्तरदाता- आरोपी के विरुद्ध लोहरदग्गा के अपर न्यायिक आयुक्त द्वारा दिए गए बरी करने के आदेश को चुनौती दी है, जिसे पटना उच्च न्यायालय, रांची न्यायपीठ द्वारा दांडिक पुनरीक्षण आवेदन संख्या 10/1992 में पुष्टि की गई थी। अपील के लिए विशेष अनुमति देते हुए, इस न्यायालय के दो विद्वान न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ ने 25 मार्च 1996 के आदेश द्वारा उत्तरदाता सं. 4 और मूल आरोपी सं. 2 श्रीमती झालो देवी, मृतक की सास, के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका खारिज कर दी, जबकि केवल उत्तरदाता सं. 1, 2 और 3, जो क्रमशः बिहार राज्य और मूल आरोपी सं. 1 और 3 हैं, के विरुद्ध विशेष अनुमति दी गई। आरोपी सं. 1 और 3 क्रमशः मृतक किरण देवी के पति और देवर हैं।

इस वाद में, अपीलकर्ता- शिकायतकर्ता की बेटी, किरण देवी नामक 28 वर्षीय एक युवा विवाहित महिला के साथ एक दुखद घटना घटी, जिसकी कथित तौर पर उत्तरदाता- आरोपी द्वारा हत्या कर दी गई थी या उसे आरोपी के घर के पीछे स्थित एक कुएं में गिरकर आत्महत्या करने के लिए मजबूर किया गया था।

इन कार्यवाही से संबंधित कुछ तथ्यों पर प्रारंभ में ध्यान देना आवश्यक है। मृतक किरण देवी का विवाह उत्तरदाता सं. 2 परान प्रसाद अग्रवाल से वर्ष 1977 में हुआ था। अभियोजन पक्ष का कहना है कि विवाह के पांच- छह वर्ष बाद भी जब कोई संतान उत्पन्न नहीं हुई, तो मृतक की सास उत्तरदाता सं. 4 (जिसके बरी होने के विरुद्ध वर्तमान कार्यवाही अस्तित्व में नहीं है) और मृतक के पति के बड़े भाई उत्तरदाता सं. 3 ने आरोपी सं. 1- उत्तरदाता सं. 2 की हत्या करवाकर उसे किसी अन्य लड़की से विवाह करवाने की कोशिश की। मृतक के

पिता, जो शिकायतकर्ता हैं, का यह भी कहना है कि उन्होंने किरण देवी का स्त्री रोग विशेषज्ञ से इलाज करवाया और बाद में उन्होंने दो पुत्रों को जन्म दिया। आरोप है कि उपरोक्त घटनाओं के बावजूद किरण देवी पर अत्याचार जारी रहा। वे दहेज की मांग करते रहे और किरण देवी द्वारा उनकी मांग पूरी न करने पर आरोपियों ने उन्हें पीटना शुरू कर दिया और उन्हें प्रताड़ित किया, जिससे उनके जीवन को खतरा उत्पन्न हुआ। अत्याचारों से तंग आकर उन्होंने पहले भी प्रयास किए थे। लगभग चार साल पहले उसी कुएं में कूदने की कोशिश की गई थी। लेकिन पड़ोसियों ने उसे बचा लिया था। इस संबंध में किरण देवी ने स्वयं अपने पति और ससुराल वालों के खिलाफ संबंधित पुलिस थाने में रिपोर्ट दर्ज कराई थी। इसके बाद किरण देवी अपने मायके में रहने लगीं। हालांकि, उनके पिता के कहने पर उनके पति और ससुराल वालों के साथ समझौता हुआ और उन्हें 1988 में उनके ससुराल लाया गया, जहां वे अपनी दुखद मृत्यु तक रहीं। अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि 30 और 31 अक्टूबर 1988 की दुर्भाग्यपूर्ण रात को लगभग 2.00 बजे किरण देवी अपने ससुराल के घर के पिछवाड़े में स्थित कुएं में गिर गईं, जिसमें उनके साथ तीनों आरोपी भी रहते थे। 31 अक्टूबर 1988 को लगभग 10.00 बजे उनके पति, उत्तरदाता सं. 2 ने अपीलकर्ता को सूचित किया कि उनकी बेटी किरण देवी की कुएं में गिरने से मृत्यु हो गई है। इसके बाद अपीलकर्ता अपने ससुराल वालों के घर गया। ससुराल में जहाँ उन्हें कुएँ के पास अपनी बेटी का शव मिला, उन्हें गहरा सदमा लगा। इसके बाद, 12 नवंबर 1988 को वे अपने पोते से मिलने के लिए आरोपी के घर गए। उस समय पड़ोसियों ने उन्हें बताया कि घटना वाले दिन की रात आरोपी के घर में झगड़ा हुआ था और उन्होंने किरण देवी के रोने- चिल्लाने की आवाज़ सुनी थी और ससुराल वाले उस पर हमला कर रहे थे। इस सूचना पर संदेह होने पर, अपीलकर्ता ने 12 नवंबर 1988 को आरोपी द्वारा अपनी बेटी किरण देवी की हत्या के संबंध में लिखित रिपोर्ट/प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई। उनका कहना है कि पुलिस ने आरोपी के खिलाफ कोई मामला दर्ज नहीं किया क्योंकि पुलिस अधीक्षक की अनुमति प्राप्त करनी थी। अंततः, अपीलकर्ता की शिकायत पर पुलिस अधीक्षक के समक्ष 18 जनवरी 1990 को मामला दर्ज करने का आदेश दिया गया। जांच के बाद, पुलिस ने धारा 498-ए, 302 और 120-बी के तहत आरोप पत्र दाखिल किया। मृतक की सास (जिसे बरी कर दिया गया) और उत्तरदाता-आरोपी के खिलाफ भारतीय दंड संहिता के तहत मामला लोहरदग्गा के माननीय मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष दायर किया गया था। अंततः मामला सत्र न्यायालय, अर्थात् अपर न्यायिक आयुक्त, लोहरदग्गा को सौंप दिया गया। माननीय विचारण न्यायाधीश ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के तहत आरोपियों के खिलाफ आरोप तय किए। मुकदमे की सुनवाई पूरी होने पर माननीय न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अभियोजन पक्ष ने

अभियुक्तों के विरुद्ध धारा 302 और धारा 34 के तहत कोई मामला सिद्ध नहीं किया है। माननीय न्यायाधीश ने स्पष्ट किया कि अभिलेखों में साक्ष्य मौजूद हैं कि अभियुक्त परान प्रसाद अग्रवाल के परिवार के सदस्य पीड़िता किरण देवी पर हमला करते थे और उनसे दहेज की मांग करते थे। इन अभियुक्तों ने पीड़िता को जान से मारने और परान प्रसाद अग्रवाल की शादी किसी और महिला से करवाने की धमकी भी दी थी। लेकिन चूंकि किरण देवी का विवाह 1977 में हुआ था और हत्या 1988 में हुई थी, यानी सात वर्ष से अधिक का समय बीत चुका था, इसलिए यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि किरण देवी की हत्या दहेज के लिए की गई होगी। माननीय न्यायाधीश ने आगे कहा कि उन्हें इस बात पर संदेह था कि इन अभियुक्तों ने धमकी के कारण किरण देवी की हत्या की थी, लेकिन कानूनी साक्ष्य न होने के कारण वे असहाय थे और इन अभियुक्तों को दोषी नहीं ठहरा सकते थे। जमीन पर गिर पड़ा। अपीलकर्ता ने इस मामले को उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण के लिए ले गया। उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने पुनरीक्षण आवेदन पर निर्णय देते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्तों के विरुद्ध पुनरीक्षण कार्यवाही में हस्तक्षेप करने का कोई मामला नहीं बनता, क्योंकि ऐसा कोई साक्ष्य नहीं था जिससे यह साबित हो सके कि अभियुक्त किरण देवी की हत्या के लिए जिम्मेदार थे।

अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सान्याल ने पुरजोर तर्क दिया कि अधीनस्थ दोनों न्यायालय इस सुस्थापित तथ्य को समझने में विफल रहे हैं कि मृतक किरण देवी आरोपियों के निरंतर क्रूर व्यवहार का शिकार थीं। उन्होंने पहले भी उसी कुएं में कूदकर आत्महत्या करने का प्रयास किया था, लेकिन पड़ोसियों ने उन्हें बचा लिया था। आरोपी उन्हें प्रताड़ित कर रहे थे और उनके साथ अत्यधिक क्रूरता का व्यवहार कर रहे थे। इन परिस्थितियों में, भले ही उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को उन्हें कुएं में फेंकने के आरोपियों के प्रत्यक्ष कृत्य के संबंध में कोई स्पष्ट साक्ष्य न हो, यह आसानी से देखा जा सकता है कि कम से कम आरोपियों द्वारा की गई क्रूरता के कारण उन्हें आत्महत्या करने के लिए विवश होना पड़ा। इस संबंध में अपीलकर्ता के साक्ष्य, जो पड़ोसियों द्वारा उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को आरोपियों के घर में घटी घटनाओं के बारे में बताई गई बातों पर आधारित हैं और अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य द्वारा समर्थित हैं, भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत आरोपियों के खिलाफ कम गंभीर आरोप को स्पष्ट रूप से स्थापित करते हैं। भले ही पुलिस ने आरोपियों के खिलाफ धारा 498-ए के तहत भी आरोप पत्र दाखिल किया हो, 498-ए के मामले में विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अभियुक्त के विरुद्ध वैकल्पिक आरोप निर्धारित करने में त्रुटिपूर्ण कार्य किया था। अतः उन्होंने निवेदन

किया कि या तो मामले को नए सिरे से सुनवाई के लिए वापस भेजा जाए या यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए अभिलेखों में उपस्थित साक्ष्यों की जांच करे और भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के अंतर्गत अभियुक्त की संलिप्तता के संबंध में उचित निर्णय ले।

दूसरी ओर, उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि यद्यपि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत कोई आरोप निर्धारित नहीं किया गया था और अभियोजन पक्ष के साक्ष्य भारतीय दंड संहिता की धारा 302 को धारा 34 के साथ मिलाकर अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में अपर्याप्त थे, इसलिए अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दिया गया और उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण में पुष्टि किया गया बरी करने का आदेश बरकरार रखा जाना चाहिए। हालांकि, उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि यदि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत कम गंभीर आरोप का सामना करने के लिए बुलाया जाना आवश्यक है, तो अभियुक्तों पर तदनुसार आरोप लगाया जा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि यह न्यायालय अभिलेख में मौजूद साक्ष्यों का मूल्यांकन करने और धारा 498-ए के तहत अपराध के संबंध में अभियुक्तों की संलिप्तता पर गुण- दोष के आधार पर निर्णय लेने के लिए इच्छुक है, तो उनके अनुसार साक्ष्य अभियुक्तों को उक्त अपराध से नहीं जोड़ते हैं। अभिलेख में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि शिकायतकर्ता को उस दुर्भाग्यपूर्ण रात की घटना के बारे में पड़ोसियों द्वारा सूचित किया गया था, क्योंकि मामले में अभियोजन पक्ष के साक्षी के रूप में जांच किए गए पड़ोसी मुकर गए थे। और उन्होंने पुलिस को दिए गए अपने बयानों और शिकायतकर्ता को दिए गए उन बयानों के संबंध में अभियोजन पक्ष का समर्थन नहीं किया, जो उन्होंने उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को हुए झगड़े की घटना के बारे में दिए थे। उन्होंने कहा कि शिकायतकर्ता द्वारा पड़ोसियों से प्राप्त जानकारी के बारे में दिया गया बयान पूरी तरह से अनुश्रुत बातों पर आधारित साक्ष्य था और कानूनी रूप से उस पर भरोसा नहीं किया जा सकता था। उन्होंने तर्क दिया कि एक बार उस साक्ष्य को खारिज कर दिया जाए तो अभिलेख में ऐसा कुछ भी नहीं बचता जिससे यह पता चले कि घटना की रात वास्तव में क्या हुआ था जिसके परिणामस्वरूप किरण देवी कुएं में डूब गईं और यह एक मात्र दुर्घटना हो सकती है या यह मानते हुए भी कि उन्होंने आत्महत्या की थी, ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह साबित हो कि आरोपी उक्त आत्महत्या के लिए जिम्मेदार थे या उन्होंने जानबूझकर अपने आचरण से किरण देवी को उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को आत्महत्या करने

के लिए मजबूर किया था। इसलिए, उन्होंने तर्क दिया कि अभिलेख में उपलब्ध साक्ष्यों के आलोक में धारा 498-ए के तहत आरोप भी आरोपियों पर सिद्ध नहीं होता है।

इन परस्पर विरोधी दलीलों पर गहन विचार करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अभियोजन पक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 34 के तहत उत्तरदाता-आरोपी के विरुद्ध कोई मामला सिद्ध नहीं कर पाया है। ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को अभियुक्तों में से किसी ने भी किरण देवी को कुएं में धकेला या फेंका था। लेकिन मामला यहीं समाप्त नहीं होता। जैसा कि अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने सही तर्क दिया है, अभिलेख में मौजूद साक्ष्य स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत अभियुक्तों के विरुद्ध मामला बनता है। उक्त प्रावधान इस प्रकार है:

> *498-ए. किसी महिला के पति या उसके रिश्तेदार द्वारा उस पर क्रूरता करना।* जो कोई भी किसी स्त्री का पति या पति का रिश्तेदार होकर उस स्त्री पर अत्याचार करता है, उसे तीन वर्ष तक के कारावास की सजा दी जाएगी और उस पर जुर्माना भी लगाया जाएगा।
>
> स्पष्टीकरण.- इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "क्रूरता" का अर्थ है-
>
> (क) कोई भी जानबूझकर किया गया ऐसा आचरण जो इस प्रकार का हो कि वह महिला को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित करे या उस महिला के जीवन, अंग या स्वास्थ्य (मानसिक या शारीरिक) को गंभीर चोट या खतरा पहुंचाए; या
>
> (ख) महिला का उत्पीड़न, यदि ऐसा उत्पीड़न उसे या उसके किसी रिश्तेदार को किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के लिए किसी गैरकानूनी मांग को पूरा करने के लिए बाध्य करने के उद्देश्य से किया जाता है, या उसके द्वारा या उसके किसी रिश्तेदार द्वारा ऐसी मांग को पूरा करने में विफलता के कारण किया जाता है।

यह सत्य है कि यद्यपि पुलिस ने अभियुक्त के विरुद्ध धारा 498-ए के अंतर्गत भी आरोपपत्र दाखिल किया था, फिर भी अधीनस्थ न्यायालय ने धारा 302 के अंतर्गत आरोप तय किया, जो स्पष्टतः अधिक गंभीर अपराध है, और धारा 498-ए, भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आरोप तय करना उचित नहीं समझा। परन्तु अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य, जैसा कि हम आगे बताएंगे, उक्त आरोप को स्पष्ट रूप से आकर्षित करते हैं। इन परिस्थितियों में हमें अभियुक्त- अभियुक्त

के विरुद्ध धारा 498-ए के अंतर्गत आरोप तय करने के बाद उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर पुनर्विचार हेतु इन कार्यवाही को पुनः सुनवाई के लिए वापस भेजना आवश्यक होता, परन्तु यह प्रक्रिया आवश्यक नहीं है क्योंकि भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत प्राप्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए यह न्यायालय अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों के आलोक में उक्त धारा के अंतर्गत अपराध के लिए अभियुक्त की संलिप्तता के प्रश्न की स्वयं जांच कर सकता है, ताकि मुकदमे के संरक्षण और अभियुक्त के विरुद्ध अनेक कार्यवाही की आवश्यकता न पड़े।

अतः हमने भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत अपराध के लिए उत्तरदाता-आरोपी की दोषसिद्धि के प्रश्न पर विचार करना उचित समझा है। यह अब सर्वविदित है कि अनुच्छेद 142 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, इस न्यायालय के समक्ष लाए गए मामलों में न्याय के हित में उचित आदेश पारित किए जा सकते हैं। [देखें *ई.के. चंद्रसेनन बनाम केरल राज्य,* [1995] 2 एससीसी 99. तदनुसार, हमने इस प्रश्न पर पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है। हमें अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक साक्ष्यों से अवगत कराया गया है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद, हम पाते हैं कि अभियोजन पक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत आरोपी के अपराध को सिद्ध करने में सक्षम रहा है।

इस संदर्भ में हम अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक साक्ष्यों का उल्लेख कर सकते हैं। अपीलकर्ता के रूप में उपस्थित अ.सा. 9 ने शपथपूर्वक बयान दिया कि 31 अक्टूबर 1988 को सुबह 10:00 बजे उनके दामाद परान प्रसाद अग्रवाल ने उन्हें सूचना दी कि उनकी बेटी कुएं में गिरने से मर गई है। इसके बाद वे मौके पर गए और उनका शव देखा। उन्होंने आगे बयान दिया कि 12 नवंबर 1988 को वे अपने सबसे छोटे पोते को देखने के लिए फिर से आरोपी दामाद के घर गए और उस समय उन्होंने मोहल्ले में रहने वाले पड़ोसियों से घटना के बारे में पूछताछ की। पड़ोसियों ने उन्हें बताया कि घटना से पिछली रात किरण देवी को उनकी सास झालो देवी, परान प्रसाद और परान प्रसाद के बड़े भाई ने पीटा था और किरण देवी 'बचाओ बचाओ', 'बचाओ बचाओ' चिल्ला रही थीं। उन्होंने यह भी बताया कि किरण देवी की सास, पति और पति के बड़े भाई गिरबर प्रसाद कह रहे थे कि वे किरण देवी को मारकर परान प्रसाद की दूसरी शादी करवा देंगे और उन्हें जान से मारने की धमकी दे रहे थे। यह बात उन्हें पड़ोसियों, शिव नाथ महतो, अ.सा.4, लक्ष्मी महतो, अ.सा.3 और अन्य, अर्थात्, बीरेंद्र प्रसाद आदि ने बताई थी। उन्होंने यह भी बताया कि अपनी पुलिस शिकायत में उन्होंने उन साक्षियों के नाम भी दिए थे जिन्होंने उन्हें सूचना दी थी, अर्थात् अजय मित्तल, अवधेश प्रसाद, शिव नाथ महतो,

लक्ष्मी महतो और बीरेंद्र प्रसाद। उन्होंने अपनी बेटी की शादी के बाद आरोपियों द्वारा उसके साथ किए गए अत्याचारों के बारे में भी बयान दिया था। उनकी बेटी किरण देवी ने उन्हें बताया था कि उसका पति उससे पैसे लाने के लिए कहता था और इस पर उन्होंने जवाब दिया कि वह पहले ही 10,000 रुपये दे चुके हैं। वह यह भी कहती थी कि उसके पति परान प्रसाद, गिरबर प्रसाद और सास झालो देवी उसे पीटते थे। उसकी बेटी का विवाह 1977 में हुआ था। 5-6 साल तक उसे कोई संतान नहीं हुई, इसलिए उसके ससुराल वालों ने उसे प्रताड़ित करना शुरू कर दिया और परान प्रसाद से दूसरी शादी करवाना चाहा। उन्होंने किरण देवी का रांची में इलाज कराया और परिणामस्वरूप उसने दो बेटों को जन्म दिया। इस घटना से लगभग चार साल पहले, ससुराल वालों के अत्याचारों के कारण उसकी बेटी किरण देवी उसी कुएं में कूद गई थी। हालांकि, पड़ोसियों ने उसे बचा लिया था। अपने सबसे छोटे बेटे के जन्म के बाद, वह उसके घर में रहने लगी क्योंकि उसका दामाद उसे वापस नहीं ले रहा था। उसने अपने दामाद को मनाकर अपनी बेटी को उसके ससुराल भेज दिया। प्रतिपरीक्षण में वह अपने बयान पर कायम रहा कि मोहल्ले के लोगों ने उसे बताया था कि उस मनहूस रात को उन्होंने खुद झगड़े की आवाज और उसे जान से मारने की धमकी सुनी थी। उसने इस संबंध में पुलिस के सामने दिए अपने बयान को भी दोहराया। अपीलकर्ता ने दो पोस्टकार्ड पेश किए जो उसे उसकी बेटी के गर्भवती होने के दौरान मिले थे। इन पोस्टकार्डों में उसे बताया गया था कि उसका दामाद लालो देवी से शादी करने की कोशिश कर रहा है। प्रतिपरीक्षण में उसके उपरोक्त बयान को गलत साबित करने वाला कोई ठोस साक्ष्य सामने नहीं आया। यह बयान अन्वेषण अधिकारी, अ.सा. 8 केदार नाथ पाठक के साक्ष्य से पूरी तरह से पुष्ट होता है। अपीलकर्ता के उपरोक्त साक्ष्य से स्पष्ट रूप से उसकी बेटी, मृतक किरण देवी द्वारा आरोपी के हाथों झेली गई पीड़ा का पता चलता है और स्थिति इतनी बिगड़ गई थी कि उसने पहले भी आत्महत्या करने की कोशिश की थी और पड़ोसियों ने उसे बचा लिया था। आरोपी के हाथों अपनी बेटी द्वारा झेली गई पीड़ा के बारे में उसने जो कुछ बताया था, उसका साक्ष्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के तहत स्पष्ट रूप से स्वीकार्य है। उनके साक्ष्य से यह भी स्पष्ट होता है कि उत्तरदाता- आरोपी का क्रूर व्यवहार कम नहीं हुआ और ऐसा प्रतीत होता है कि यह उस दुर्भाग्यपूर्ण रात तक जारी रहा जब मृतक के लिए स्थिति असहनीय हो गई और परिणामस्वरूप आरोपी के घर के आंगन में स्थित कुएं में डूबकर उसकी दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु हो गई। यह समझना आवश्यक है कि उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को पीड़िता के अलावा केवल आरोपी ही घर में मौजूद थे। इस प्रकार उस रात क्या हुआ और किस कारण से मृतक कुएं में गिरी, यह पूरी तरह से आरोपियों के व्यक्तिगत और विशेष ज्ञान में होगा। लेकिन उन्होंने इस पहलू पर चुप्पी साधे रखी। यह निश्चित रूप से

सच है कि मामले को संदेह से परे साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर है। लेकिन एक बार जब अभियोजन पक्ष यह साबित कर देता है कि आरोपी मृतक के प्रति वर्षों तक लगातार क्रूरतापूर्ण व्यवहार के दोषी थे, जैसा कि अ.सा. 9 के अडिग साक्ष्य से अच्छी तरह से स्थापित है। मृतक लड़की के पिता के अनुसार, उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को घर में मौजूद आरोपियों को जो तथ्य व्यक्तिगत रूप से ज्ञात थे, वे अभियोजन पक्ष के मामले को गलत साबित करने के लिए उनका खुलासा कर सकते थे। भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के तहत इस दायित्व का निर्वहन उन्होंने नहीं किया है। इस संबंध में, हम इस न्यायालय के कुछ निर्णयों का उल्लेख कर सकते हैं। *शंभू नाथ मेहरा बनाम अजमेर राज्य* एआईआर (1956) एससी 404 में, दो सदस्यीय न्यायपीठ की ओर से बोलते हुए, बोस ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 108 की आपराधिक अभियोजनों पर प्रयोज्यता का उल्लेख करते हुए रिपोर्ट के कंडिका 10 और 11 में निम्नानुसार कहा:

> "(10) धारा 106, धारा 101 का अपवाद है। धारा 101 साक्ष्य के भार के बारे में सामान्य नियम निर्धारित करती है।
>
> 'जो कोई भी किसी न्यायालय से किसी कानूनी अधिकार या दायित्व के संबंध में निर्णय चाहता है जो उसके द्वारा बताए गए तथ्यों के अस्तित्व पर निर्भर करता है, उसे यह साबित करना होगा कि वे तथ्य मौजूद हैं।'
>
> दृष्टांत (क) बताता है-
>
> 'ए चाहता है कि न्यायालय यह निर्णय दे कि बी को उस अपराध के लिए दंडित किया जाए जिसे ए का कहना है कि बी ने किया है।'
>
> 'ए को यह साबित करना होगा कि बी ने अपराध किया है।'
>
> (11) यह सामान्य नियम निर्धारित करता है कि दांडिक वाद में साक्ष्य का भार अभियोजन पक्ष पर होता है और धारा 106 का उद्देश्य निश्चित रूप से उसे उस कर्तव्य से मुक्त करना नहीं है। इसके विपरीत, यह कुछ असाधारण मामलों से निपटने के लिए बनाया गया है जिनमें अभियोजन पक्ष के लिए उन तथ्यों को स्थापित करना असंभव होगा, या कम से कम अत्यधिक कठिन होगा, जो विशेष रूप से आरोपी के ज्ञान में हैं और जिन्हें वह बिना किसी कठिनाई या असुविधा के साबित कर सकता है।

मद्रास सीमा शुल्क संग्राहक और अन्य बनाम डी. भूर्मुल एआईआर 1974 एससी 959 वाद में, इस न्यायालय के दो विद्वान न्यायाधीशों की एक अन्य न्यायपीठ ने समुद्री सीमा शुल्क अधिनियम, 1878 के तहत अपराध पर विचार करते हुए, रिपोर्ट के कंडिका 31 और 32 में साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के दायरे को निम्नलिखित शब्दों में निर्धारित किया:

> "31. साक्ष्य के बोझ के निर्धारण पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालने वाला दूसरा प्रमुख सिद्धांत यह है कि साक्ष्यों की पर्याप्तता और महत्व पर विचार किया जाना चाहिए - लॉर्ड मैन्सफील्ड के शब्दों में कहें तो, *ब्लैच बनाम आर्चर* (1774) 1 काठप 63 पृष्ठ 65 'एक प क्ष के पास जो साक्ष्य साबित करने की शक्ति थी, और दूसरे पक्ष के पास जिसका खंडन करने की शक्ति थी। चूंकि अभियोजन पक्ष के लिए उन तथ्यों को साबित करना बेहद मुश्किल है, यदि बिल्कुल असंभव नहीं है, जो विशेष रूप से विरोधी या आरोपी के ज्ञान में हैं, इसलिए वह उन्हें अपने प्राथमिक भार के हिस्से के रूप में साबित करने के लिए बाध्य नहीं है।
>
> 32. तस्करी, कानूनी शुल्कों से बचने के लिए वस्तुओं का गुप्त परिवहन है। गोपनीयता और चोरी- छिपे किए जाने के कारण, निवारक विभाग के लिए इस प्रक्रिया की हर कड़ी को सुलझाना असंभव है। इस अवैध धंधे से संबंधित कई तथ्य इसमें शामिल व्यक्ति के विशेष या विशिष्ट ज्ञान में रहते हैं। साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अंतर्निहित सिद्धांत के अनुसार, उन तथ्यों को साबित करने का भार संबंधित व्यक्ति पर होता है और यदि वह उन तथ्यों को साबित करने या समझाने में विफल रहता है, तो उसके विरुद्ध तथ्यों का प्रतिकूल निष्कर्ष निकल सकता है, जो अभियोजन पक्ष या विभाग द्वारा प्रस्तुत अनुमानित साक्ष्य के साथ मिलकर व्यक्ति के पक्ष में निर्दोषता की प्रारंभिक धारणा को खंडित कर देगा और परिणामस्वरूप उसे दोषी साबित कर देगा। जैसा कि बेस्ट ने 'साक्ष्य का कानून' (12वां संस्करण, लेख 320, पृष्ठ 291) में बताया है "निर्दोषता की धारणा निस्संदेह कानूनी अनुमान है, लेकिन रोजमर्रा के व्यवहार से पता चलता है कि हाल ही में चोरी की संपत्ति के (अस्पष्ट) कब्जे से उत्पन्न होने वाली दोषसिद्धि की धारणा द्वारा इसका सफलतापूर्वक सामाधान किया जा सकता है" हालांकि यह केवल तथ्य की धारणा है। इस प्रकार, अभियोजन पक्ष या विभाग पर बोझ काफी हद तक कम हो सकता है, भले ही उनके पक्ष में तथ्य की ऐसी धारणा उत्पन्न हो। हालांकि, इसका यह अर्थ नहीं है कि जिस व्यक्ति के खिलाफ कार्यवाही की जा रही है, उसके विशेष या विशिष्ट ज्ञान से अभियोजन पक्ष या विभाग उस तथ्य के संबंध में

कुछ साक्ष्य पेश करने के बोझ से पूरी तरह मुक्त हो जाएगा। यह केवल उस बोझ को कम करेगा जिसके निर्वहन के लिए बहुत कम साक्ष्य भी पर्याप्त हो सकते हैं।"

दूसरी ओर, अपीलकर्ता- शिकायतकर्ता के साक्ष्य, जो प्रतिपरीक्षण की कसौटी पर खरे उतरे हैं, ने मृतक के प्रति जानबूझकर की गई क्रूरता के संबंध में आरोपियों के दोष को स्पष्ट रूप से स्थापित किया है। यह सच है कि उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को जो कुछ हुआ था, वह साक्षी शिव नाथ महतो, अ.सा.4, लक्ष्मी महतो, अ.सा.3 और अन्य साक्षियों द्वारा शिकायतकर्ता को बताया गया था, जो सभी मुकर गए हैं।

अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि साक्षी अ.सा.8 द्वारा दिए गए बयान को अनुश्रुत बातों के दायरे में नहीं रखा जा सकता, क्योंकि इन सूचनादाताओं की साक्षी के रूप में जांच की जा चुकी है। उन्होंने यह तर्क दिया कि किसी भी साक्षी के मौखिक बयान को अनुश्रुत बात तभी कहा जा सकता है जब वह बयान साक्षी द्वारा उन लोगों से सुनी गई बातों पर आधारित हो जो न्यायालय के सामने उपस्थित नहीं हैं। दूसरे शब्दों में, साक्षी वह बात कह रहा है जो उसने बाहरी लोगों से सुनी है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 60 में यह प्रावधान है कि मौखिक साक्ष्य प्रत्यक्ष होना चाहिए। यदि यह किसी ऐसे तथ्य को संदर्भित करता है जिसे सुना जा सकता है, तो यह उस साक्षी का साक्ष्य होना चाहिए जो कहता है कि उसने इसे सुना है। न्यायालय के समक्ष साक्ष्य को मूल और अप्रामाणिक में विभाजित किया जा सकता है। मूल वह है जिसे एक साक्षी स्वयं अपनी इंद्रियों के माध्यम से देखने या सुनने का दावा करता है। अप्रामाणिक, जिसे व्युत्पन्न, प्रसारित, अप्रत्यक्ष या अनुश्रुत बात भी कहा जाता है, वह है जिसे एक साक्षी केवल बता रहा है - वह नहीं जो उसने स्वयं देखा या सुना है, न ही वह जो उसकी शारीरिक इंद्रियों के प्रत्यक्ष अवलोकन में आया है, बल्कि वह जो उसने सुना है। किसी तीसरे व्यक्ति के माध्यम से इस तथ्य के बारे में जानकारी प्राप्त हुई। अतः, अनुश्रुत बात किसी भी मौखिक बयान का द्वितीयक साक्ष्य है। अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यदि मुखबिरों को वर्तमान मामले की तरह साक्षियों के रूप में परीक्षित किया जाता है, तो अनुश्रुत बात पर आपत्ति समाप्त हो जाती है क्योंकि तब यह सूचक का मूल साक्ष्य बन जाता है, जिससे अ.सा. 6 को दी गई जानकारी की सत्यता के बारे में प्रतिपरीक्षण की जा सकती है और ऐसी स्थिति में अ.सा. 6 और मुखबिरों द्वारा दिए गए बयानों की जांच की जाएगी और न्यायालय को यह निर्धारित करने के लिए उनका मूल्यांकन करना होगा कि शपथ पर दिए गए बयानों में से कौन सा सही है। इस संबंध में हमें इस न्यायालय के एक निर्णय का हवाला दिया गया था। *भुगदोमल गंगाराम और अन्य बनाम गुजरात राज्य* एआईआर (1993)

एससी 906 में पृष्ठ 910 पर, वरदराजन, न्यायमूर्ति ने अ.सा. 12 के साक्ष्य पर विचार करते हुए, रिपोर्ट के कंडिका 13 में निम्नलिखित प्रासंगिक टिप्पणियां कीं:

> "आरोपी सं. 3 और 5 को माननीय एकल न्यायाधीश द्वारा अधिनियम की धारा 66 (1) (ख) के तहत दोषी ठहराया गया है। अभियोजन पक्ष साक्षी संख्या 12 के साक्ष्य पर भरोसा करते हुए यह दर्शाता है कि उसे 12-9-1970 की शाम को सूचना मिली थी कि बड़ौदा से ट्रक जीटीडी 4098 अहमदाबाद के लिए शराब ले जा रहा होगा और आरोपी सं. 3 और 4 तथा कुछ अन्य व्यक्ति ट्रक के पीछे टैक्सी में आ रहे होंगे। लेकिन चूंकि सूचना देने वाले को साक्षी के रूप में पेश नहीं किया गया है, इसलिए अ.सा. 12 का यह साक्ष्य कि उसे सूचित किया गया था कि आरोपी सं. 3 और 4 ट्रक के पीछे टैक्सी में आ रहे होंगे, स्वीकार्य नहीं है।"

अतः यह निवेदन किया गया कि किसी साक्षी द्वारा दूसरे साक्षी से प्राप्त सूचना के संबंध में दिया गया बयान तब तक अनुश्रुत बात ही रहेगा जब तक कि सूचना देने वाले व्यक्ति की भी वाद में जांच न की जाए और उससे प्रतिपरीक्षण न की जाए। बाद की स्थिति में अनुश्रुत बात होने की आपत्ति समाप्त हो जाएगी और न्यायालय को संबंधित साक्षियों द्वारा दिए गए बयानों के सापेक्ष गुण- दोषों का मूल्यांकन करना होगा, जिनमें से एक सूचना की पुष्टि करता है और दूसरा उसका खंडन करता है। दूसरी ओर, उत्तरदाता- आरोपी की ओर से यह निवेदन किया गया कि चूंकि सूचक अ.सा. 3 और अ.सा. 4 मुकर गए हैं, इसलिए अ.सा. 8 को दी गई उनकी कथित सूचना का संस्करण और उससे संबंधित विवरण अनुश्रुत बातों के दायरे में ही रहेंगे क्योंकि उन्होंने अपनी मुख्य गवाही में ऐसी जानकारी का उल्लेख नहीं किया था। इस संबंध में अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क में हमें प्रथम दृष्टया कुछ बल मिलता है। हालांकि, वर्तमान मामले के तथ्यों के आधार पर इस पहलू पर विस्तार से चर्चा करना और यह तय करना आवश्यक नहीं है कि क्या इन विरोधी साक्षियों द्वारा अपीलकर्ता अ.सा. 6 को दी गई जानकारी अनुश्रुत बातों के दायरे में ही रही या नहीं। हम मान लेंगे कि इस जानकारी की सामग्री अनुश्रुत बातों पर आधारित साक्ष्य थी जिसे विचार में नहीं लिया जा सकता था। फिर भी, जैसा कि अभी देखा जाएगा, अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर ऐसे निर्णायक परिस्थितियाँ स्थापित की गई हैं जो उत्तरदाता- आरोपी पर भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत आरोप को स्पष्ट रूप से सिद्ध करती हैं।

अब हम इन परिस्थितियों का वर्णन करने के लिए आगे बढ़ते हैं। यह अब अच्छी तरह से स्थापित हो चुका है कि विरोधी साक्षी के हर साक्ष्य पर, उस हद तक भी, भरोसा किया जा सकता है, जिस हद तक वह अभियोजन पक्ष के संस्करण की पुष्टि करता है। (*खुज्जी उर्फ सुरेंद्र तिवारी बनाम मध्य प्रदेश राज्य,* एआईआर 1991 एससी (1953) और *सत पॉल बनाम दिल्ली प्रशासन,* एआईआर (1976) एससी 294) साक्षी लक्ष्मी महतो, अ.सा. 3 ने न्यायालय के समक्ष अपनी मुख्य परीक्षा में कहा कि उसने घटना की रात परान प्रसाद अग्रवाल (मृतक के आरोपी पति) के घर से झगड़े की आवाज सुनी। घर के अंदर लड़ाई चल रही थी और वह शोर उसी का था। रात करीब 1.00- 1.30 बजे उसने वह शोर सुना। वह एक महिला की आवाज थी, लेकिन वह यह नहीं बता सका कि वह किसकी आवाज थी। मुख्य परीक्षा में उसका यह बयान शिकायतकर्ता अ.सा. 6 द्वारा दिए गए बयान को विश्वसनीयता प्रदान करता है और 12 नवंबर 1988 को शिकायतकर्ता से मिलने पर साक्षी द्वारा उसे बताई गई बातों के बारे में उसके मामले का पूरी तरह से समर्थन करता है। जहां तक विरोधी साक्षियों शिव नाथ महतो, अ.सा. 4, लक्ष्मी महतो, अ.सा. 3 और अजय मित्तल, अ.सा. के साक्ष्य का संबंध है। जहां तक खंड 2 का संबंध है, यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने अपने पड़ोसियों, यानी वर्तमान आरोपियों की मदद करने के उद्देश्य से अन्वेषण अधिकारी के समक्ष अपने मूल बयानों से मुकर गए हैं, और न्यायालय के समक्ष शपथ पर दिए गए उनके विपरीत बयान स्पष्ट रूप से अविश्वसनीय और झूठे थे। इसलिए, हम उनके बयानों को खारिज करते हैं और इसके विपरीत शिकायतकर्ता, अ.सा. 6 के स्वाभाविक बयान पर भरोसा करते हैं, जिसका साक्ष्य अधिक विश्वसनीय और प्रामाणिक प्रतीत होता है और जिसकी पुष्टि विरोधी साक्षी अ.सा. 3 के साक्ष्य से भी होती है। हम यह भी ध्यान दे सकते हैं कि भले ही अ.सा.6 मृतक के पिता को पड़ोसियों द्वारा कथित रूप से दी गई सूचना उस दुर्भाग्यपूर्ण रात में सुनी गई बातों के बारे में दी गई जानकारी को भले ही अनुश्रुत बात मानकर खारिज कर दिया जाए, लेकिन यह तथ्य कि 12 नवंबर 1988 को पड़ोसियों द्वारा उन्हें कुछ सूचना दी गई थी, जिसके कारण उन्होंने पुलिस के पास जाने का फैसला किया, क्योंकि उन्हें पड़ोसियों द्वारा उस रात आरोपियों के आचरण के बारे में दी गई जानकारी पर गंभीर संदेह था और जिससे उन्हें अपनी बेटी की अप्राकृतिक मृत्यु के संबंध में उनकी संलिप्तता का आभास हुआ, साक्ष्य में स्वीकार्य रहेगा क्योंकि साक्षी अ.सा.6 का आचरण पड़ोसियों द्वारा दी गई ऐसी सूचना से प्रेरित था कि साक्षी ने 12 नवंबर 1988 को क्या किया और इससे पहले पुलिस के पास क्यों नहीं गया। उनके साक्ष्य का वह हिस्सा प्रतिपरीक्षण में भी नहीं बदला। इतना ही नहीं, बल्कि यहां तक कि विरोधी साक्षी अ.सा. 3 और 4, जिन पर साक्षी अ.सा. 6 को कुछ जानकारी देने का आरोप है, भी साक्ष्य के तौर पर मान्य रहेंगे।

अ.सा. 6 ने 12 नवंबर 1988 को अपनी मुख्य परीक्षा या प्रतिपरीक्षण में इस बात का जरा भी जिक्र नहीं किया कि उन्होंने कोई सूचना नहीं दी थी या 12 नवंबर 1988 को अ.सा. 6 से मुलाकात नहीं की थी, जैसा कि अ.सा. 6 ने अपने बयान में कहा है। अ.सा. 6 के साक्ष्य का यह हिस्सा अनुश्रुत बातों के साक्ष्य को बाहर रखने के नियम के अंतर्गत नहीं आता है। इस संबंध में इस न्यायालय के एक निर्णय पर ध्यान देना आवश्यक है। *जे.डी. जैन बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का प्रबंधन और अन्य* एआईआर (1982) एससी 673 में तीन विद्वान न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने न्यायमूर्ति बहारुल इस्लाम के माध्यम से रिपोर्ट के कंडिका 10 मेंं निम्नलिखित प्रासंगिक टिप्पणियां की हैं:

> "'अनुश्रुत बात' शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया जाता है। कभी- कभी इसका अर्थ होता है कि किसी व्यक्ति को जो कुछ कहते हुए सुना गया हो; कभी- कभी इसका अर्थ होता है कि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर जो कुछ घोषित करता है। (साक्ष्य के कानून पर स्टीफन की पुस्तक देखें)
>
> प्रिवी काउंसिल ने इस मामले में *सुब्रमण्यम बनाम लोक अभियोजक* (1958) 1 डब्ल्यूएलआर 985 में कहा गया है: 'किसी ऐसे साक्षी को दिए गए बयान का साक्ष्य, जिसे स्वयं साक्षी के रूप में नहीं बुलाया गया है, अनुश्रुत बात हो भी सकती है और नहीं भी। यह अनुश्रुत बात है और अस्वीकार्य है जब साक्ष्य का उद्देश्य बयान में निहित सत्य को स्थापित करना हो। यह अनुश्रुत बात नहीं है और स्वीकार्य है जब साक्ष्य द्वारा बयान की सत्यता को नहीं बल्कि इस तथ्य को स्थापित करना प्रस्तावित हो कि यह बयान दिया गया था। बयान की सत्यता से अलग, यह तथ्य कि यह बयान दिया गया था, अक्सर साक्षी या उन अन्य व्यक्तियों की मानसिक स्थिति और उसके बाद के आचरण पर विचार करने में प्रासंगिक होता है जिनकी उपस्थिति में ये बयान दिए गए थे।'"

यह भी सराहनीय है कि मृतक के पिता, अ.सा. 6 के साक्ष्य से पता चलता है कि आरोपी के घर में उनकी बेटी का वैवाहिक जीवन शुरू से ही कठिनाइयों से भरा रहा। दहेज की राशि आरोपी की संतुष्टि के अनुरूप न लाने और संतान न होने के कारण उसके साथ दुर्व्यवहार किया गया। उसके पति, आरोपी सं. 1, भी डालो देवी से पुनर्विवाह करने की योजना बना रहा था, जैसा कि पत्रों (प्रदर्श संख्या 4 और 4/1) से पता चलता है। शिकायतकर्ता के साक्ष्य से यह भी पता चलता है कि उसकी मृतक बेटी ने पहले आत्महत्या करने का प्रयास किया था,

लेकिन पड़ोसियों ने उसे समय रहते बचा लिया था। दो बेटों के जन्म के बाद भी, शिकायतकर्ता, अ.सा. 6 द्वारा दिए गए बयान के अनुसार और यहां तक कि विरोधी साक्षी 3, अ.सा. 6 द्वारा भी पुष्टि की गई, उस दुर्भाग्यपूर्ण रात तक उसकी मृतक बेटी के साथ दुर्व्यवहार और झगड़े जारी रहे, जैसा कि पहले देखा गया है। इसलिए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के तहत यह सुरक्षित रूप से माना जा सकता है कि आरोपी द्वारा मृतक के साथ किया गया क्रूर व्यवहार पहले भी जारी रहा और उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को आत्महत्या करने के लिए मजबूर होने तक जारी रहा। अभिलेख पर स्थापित क्रूर व्यवहार की निरंतरता का ऐसा अनुमान निश्चित रूप से आरोपी की ओर इशारा करता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के तहत ऐसा अनुमान अभिलेख पर अप्रतिबंधित रहा है। यह आरोपी के खिलाफ अच्छी तरह से स्थापित एक और निर्णायक परिस्थिति है। इस संबंध में हम इस न्यायालय द्वारा अपने दो निर्णयों में कही गई बातों का उल्लेख कर सकते हैं। *अंबिका प्रसाद ठाकुर और अन्य बनाम राम इकबाल राय (मृत) उनके कानूनी वारिसों और अन्य* एआईआर (1966) एससी 605 में इस न्यायालय की तीन सदस्यीय न्यायपीठ ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के दृष्टांत (डी) का उल्लेख करते हुए रिपोर्ट के कंडिका 15 में निम्नलिखित प्रासंगिक टिप्पणियां की हैं:

> "यदि किसी वस्तु या अवस्था का अस्तित्व सिद्ध हो जाता है, तो उसके आगे और पीछे दोनों ओर उचित निकटवर्ती समय में निरंतरता का अनुमान लगाया जा सकता है। भविष्य में निरंतरता की धारणा का उल्लेख धारा 114 के दृष्टांत (घ) में किया गया है। उपयुक्त मामलों में, इस धारा के अंतर्गत किसी वस्तु या अवस्था की पीछे की ओर निरंतरता का अनुमान लगाया जा सकता है, यद्यपि इस बिंदु पर धारा में कोई अलग दृष्टांत नहीं दिया गया है। यह नियम कि निरंतरता की धारणा पूर्वव्यापी रूप से लागू हो सकती है, भारत में भी मान्यता प्राप्त है। यह साक्ष्य का वह नियम है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति पीछे की ओर वस्तुओं की निरंतरता का अनुमान लगा सकता है। समय बीतने के साथ निरंतरता की धारणा कमजोर हो जाती है। यह धारणा कितनी हद तक पीछे और आगे की ओर लगाई जा सकती है, यह वस्तु की प्रकृति और आसपास की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।"

इस न्यायालय की एक अन्य तीन सदस्यीय न्यायपीठ ने मामले में *काली राम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य* एआईआर (1973) एससी 2773 में न्यायमूर्ति खन्ना के माध्यम से बोलते हुए, रिपोर्ट के कंडिका 24 में निम्नलिखित प्रासंगिक टिप्पणियां की गई हैं:

"वैधानिक अनुमानों के मामलों को छोड़कर, अपराध के विभिन्न तत्वों को साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर है और जब तक वह इस भार को पूरा नहीं करता, अभियोजन पक्ष सफल नहीं हो सकता। न्यायालय, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 में उल्लिखित अनुसार, किसी भी ऐसे तथ्य के अस्तित्व का अनुमान लगा सकता है जिसके घटित होने की संभावना उसे लगती है, प्राकृतिक घटनाओं, मानवीय आचरण और सार्वजनिक एवं निजी व्यवसाय के सामान्य क्रम को ध्यान में रखते हुए, विशेष मामले के तथ्यों के संबंध में। उस धारा में उल्लिखित उदाहरण, यद्यपि मानवीय गतिविधि के विभिन्न क्षेत्रों से लिए गए हैं, संपूर्ण नहीं हैं। वे मानवीय अनुभव पर आधारित हैं और प्रत्येक मामले के तथ्यों के संदर्भ में लागू किए जाने चाहिए। ये उदाहरण केवल उन परिस्थितियों के उदाहरण हैं जिनमें कुछ अनुमान लगाए जा सकते हैं। समान परिस्थितियों में इसी प्रकार के अन्य अनुमान धारा के प्रावधानों के तहत लगाए जा सकते हैं। किसी विशेष मामले में धारा के तहत अनुमान लगाया जा सकता है या नहीं, यह अंततः प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता है। मानव व्यवहार इतना जटिल है कि उसमें लचीलेपन की गुंजाइश होनी चाहिए। सटीक कथनों की एक श्रृंखला तैयार करके मानव व्यवहार को कठोर सीमाओं में बांधना संभव नहीं है। यहाँ की मूल सामग्री अत्यंत जटिल है, अतः इसे पूर्णतः सुस्पष्ट एवं यथार्थ प्रतिपादनों में बाँधा जाना संभव नहीं है; ऐसी सटीकता यहाँ केवल आभासी (कृत्रिम) है।"

अतः यह माना जाना चाहिए कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों के विरुद्ध अपना मामला पूरी तरह से स्थापित कर लिया है कि 30 अक्टूबर और 31 अक्टूबर 1988 की दुर्भाग्यपूर्ण रात को मृतक किरण देवी को उनकी सास, उनके पति अभियुक्त सं. 1 और उनके बड़े भाई अभियुक्त सं. 3 द्वारा क्रूरतापूर्वक प्रताड़ित किया गया, जिसके कारण उन्हें आत्महत्या करने के लिए विवश होना पड़ा। उस रात की असहनीय स्थिति की कल्पना करना आसान है जब दो नाबालिग बच्चों, जिनमें से छोटा केवल साढ़े चार वर्ष का था, की माँ को अभियुक्तों के घर में अपने दयनीय जीवन को समाप्त करने के लिए कुएँ में कूदना पड़ा। जब तक यातना असहनीय न हो गई हो, सामान्य मानवीय आचरण के अनुसार, जीवन के प्रति प्रतिबद्धताओं वाली ऐसी युवा माँ अपने नवजात बेटों को अधर में और अभियुक्तों की दया पर छोड़कर अपने जीवन को समाप्त करने का कठोर कदम नहीं उठा सकती थी, खासकर तब जब उसका पति अभियुक्त सं. 1 पुनर्विवाह की योजना बना रहा था। चूंकि मृतक किरण देवी की सास, अभियुक्त

सं. 2 की विशेष अनुमति याचिका खारिज कर दी गई है, इसलिए हमें उसकी संलिप्तता के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। हालाँकि, उपरोक्त साक्ष्य संदेह से परे यह साबित करते हैं कि उत्तरदाता, मूल आरोपी सं. 1 और 3 ने किरण देवी पर जानबूझकर और लगातार क्रूरतापूर्ण व्यवहार करके उसे अपने घर के परिसर में स्थित कुएँ में कूदकर आत्महत्या करने के लिए विवश किया था। उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क से सहमत होना संभव नहीं है कि वह गलती से कुएँ में गिर गई होगी। यह ध्यान में रखना होगा कि सर्दियों की रात में 3 बजे जब मृतक घर में सो रही होती, तो उसके लिए पीछे के बरामदे में जाने और गलती से कुएँ में गिरने का कोई कारण नहीं होता, जो घर के पिछले दरवाजे से 25 फीट दूर था, जैसा कि अ.सा. 8 अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य से स्पष्ट है। इसके विपरीत, अभियोजन पक्ष ने स्पष्ट रूप से, उचित संदेह से परे, यह दर्शाया है कि आरोपी द्वारा किए गए दुर्व्यवहार और उस पर लगातार किए गए अत्याचारों के कारण, उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को वह अंतिम आघात हुआ जिससे स्थिति पूर्णतः असहनीय हो गई। इससे पहले उसने अपने दयनीय जीवन को समाप्त करने के लिए उसी कुएँ में छलांग लगाई थी, लेकिन पड़ोसियों ने उसे बचा लिया था। फिर भी आरोपी के घर में उसका जीवन बाद में भी नहीं सुधरा। इसलिए, वह उसी कुएँ में कूदकर आत्महत्या करने का प्रयास करने के लिए विवश हो गई, जिसमें वह पहले भी कूदी थी। लेकिन उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को जब उसने कुएँ में छलांग लगाई, तो उसे बचाने के लिए कोई पड़ोसी नहीं था और उसकी जान चली गई। इन परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता कि आरोपी इस 28 वर्षीय युवा गृहिणी, दो बच्चों की माँ, के जीवन के दुखद अंत के लिए जिम्मेदार नहीं थे, जिसने आरोपी के हाथों इस तरह की भयावह पीड़ा झेलने के बाद आत्महत्या जैसा चरम कदम उठाने के लिए मजबूर हो गई थी। यह न तो हत्या का मामला है और न ही दुर्घटना का। लेकिन यह केवल आत्महत्या का मामला है जिसके लिए साक्षी द्वारा दिए गए बयान के अनुसार, आरोपी का वर्षों से लगातार शत्रुतापूर्ण व्यवहार निर्णायक साबित होता है। शिकायतकर्ता और उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को उस पर किए गए अत्याचार, जैसा कि उपर्युक्त पुख्ता निर्णायक परिस्थितियों से स्पष्ट होता है, प्रत्यक्ष रूप से इसके लिए जिम्मेदार थे। यह भी उल्लेखनीय है कि विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अपने फैसले के कंडिका 8 में इस निष्कर्ष पर पहुंचे। हालांकि, उनके विचार में यह भारतीय दंड संहिता की धारा 304-बी के तहत दहेज हत्या नहीं थी, क्योंकि मृतक की मृत्यु विवाह के सात साल से अधिक समय बाद हुई थी। लेकिन दुर्भाग्य से विद्वान विचारण न्यायाधीश धारा 498-ए के तहत वैकल्पिक मामले की जांच करने में विफल रहे, जो वर्तमान मामले के तथ्यों पर पूरी तरह से लागू होता है। इसलिए, यह माना जाना चाहिए कि वर्तमान मामले के तथ्यों के आधार पर अभियोजन पक्ष उचित संदेह से परे भारतीय दंड संहिता

की धारा 498-ए और स्पष्टीकरण (ए) के तहत अपराध साबित करने में सक्षम रहा है। जब उसे ऐसा कठोर कदम उठाने के लिए मजबूर किया गया, तब बरी हुई आरोपी सास सहित सभी आरोपी घर में मौजूद थे और उनके साथ पीड़िता और उसके दो नाबालिग बच्चे भी रहते थे। इसलिए, आरोपी ही अपने दुर्व्यवहार के कारण महिला को आत्महत्या के लिए उकसाने के लिए जिम्मेदार हैं, जिसके परिणामस्वरूप झगड़ा और चीख- पुकार हुई और एक महिला की आवाज सुनाई दी, जैसा कि विपक्षी साक्षी अ.सा.3 ने भी स्वीकार किया है, जिसने वास्तव में यह सब सुना था क्योंकि वह पड़ोसी था। अभियोजन पक्ष द्वारा सिद्ध सभी परिस्थितियाँ निर्णायक रूप से केवल आरोपियों के ही दोषी होने को साबित करती हैं, किसी और के नहीं। ये स्थापित परिस्थितियाँ किसी भी दृष्टिकोण से आरोपियों की निर्दोषता की किसी भी संभावना को पूरी तरह से खारिज कर देती हैं। दूसरे शब्दों में, परिस्थितिजन्य साक्ष्यों की श्रृंखला आरोपियों के खिलाफ इतनी पूर्ण है कि उनकी निर्दोषता के बारे में किसी भी अन्य परिकल्पना को खारिज कर देती है। तदनुसार, हम उत्तरदाता सं. 2 परान प्रसाद अग्रवाल और उत्तरदाता सं. 3 गिरबर प्रसाद अग्रवाल को धारा 498-ए, भारतीय दंड संहिता के तहत दंडनीय अपराधों के लिए दोषी ठहराते हैं।

उपरोक्त विधि से संबंधित उत्तरदाता- आरोपी को दोषी पाए जाने के मद्देनजर, अब उन पर लगाए जाने वाले उचित दंड के प्रश्न पर उनकी सुनवाई करना आवश्यक होगा। अतः, हमने उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता को इन आरोपियों से निर्देश प्राप्त करने के बाद उन पर लगाए जाने वाले उचित दंड के प्रश्न पर अपनी बात रखने का अवसर दिया है। यदि उचित समझा जाए तो उत्तरदाता- आरोपी के विद्वान अधिवक्ता संबंधित आरोपियों के शपथपत्रों के माध्यम से इस पहलू पर सामग्री प्रस्तुत कर सकते हैं। तदनुसार, सजा के प्रश्न पर आरोपियों की सुनवाई के लिए मामले को 17.1.97 तक के लिए स्थगित किया जाता है।

वी.एस.एस. अपील स्वीकृत।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमन्य होगा।